अथर्ववेद में वर्णित राज्य व्यवस्था व उसका स्वरूप

डॉ० राकेश मोहन* एवं डॉ० रामभूषण बिजल्वाण**

राज्य व्यवस्था प्राचीनकाल से समाज को जोडनें का कार्य करती रही है। यदि हम मानव के सन्दर्भ में बात करें तो राज्य व्यवस्था मानव के मस्तिष्क के समान है जो सम्पूर्ण शरीर को नियन्त्रित करता है। भारतीय राज्य व्यवस्था उतनी ही पुरानी है जितनी की यहाँ की सभ्यता, संस्कृति व धर्म है। इसको विभिन्न नामों यथा राजधर्म, राजनीति, राज्यशास्त्र दण्डनीति, नीतिशास्त्र व अर्थशास्त्र जैसे नामों से सम्बोधित किया गया है। भारतीय सभ्यता में वैदिककाल से ही राजा तथा उसको परिभाषित किया गया है। आर्यों के आगमन से पूर्व ही आर्यवर्त्त में राज्य व्यवस्था का कोई प्रमाण प्राप्त नहीं होता है। फिर भी सिन्धु सभ्यता के समयकाल में नगर प्रशासन यथा नगरपालिका जैसी किसी संस्था का आभास जरूर होता है क्योंकि सिन्धु नगरों के निर्माण तथा उनकी व्यवस्थाओं से हमें इस बात का अदाजा जरूर लग जाता है। परन्तु इसके कोई लिखित स्रोत प्राप्त नहीं होने के कारण केवल पुरातात्विक स्रोतों के आधार पर ही यह अनुमान लगाया जा सकता है।

इतिहासकारों का मानना है कि आर्य एक पशुपालक जाती थी जो मध्य एशिया से होते हुए सिन्धु नदी के तट पर आकर बसे जहाँ से ये सम्पूर्ण आर्यवर्त में फेल गये। इन्हीं क्षेत्रों में इन्होंने अपनें सभी ग्रन्थों की रचना की। क्योंकि प्रारम्भ में यह एक पशुपालक जाती थी जो धीरे धीरे जनपदों में आकर बसनें लगी। जिन्हें भविष्य में राष्ट्र पुकारा जानें लगा तथा उसके अधिपति को राजा पुकारा जानें लगा। प्रारम्भ में राजा की नियुक्ति प्रजा अपने मे से ही चुनती थी। भविष्य में राजा तथा उसकी राजव्यवस्था का वर्णन् किया जानें लगा तथा यह पद वशांनुगत होनें लगा। प्राचीन राजव्यवस्था का वर्णन् वेद तथा उसके सम्बन्धित साहित्य में पूर्ण रूप से किया गया है। प्रस्तुत शौध पत्र में वेदिक साहित्य में वर्णित राजव्यवस्था का वर्णन् किया गया है।

वैदिक साहित्य में वर्णित राज्य–व्यवस्था

वेदों को भारतीय साहित्य के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। ऋग्वेद् को विश्व के प्राचीन ग्रन्थों में स्थान प्राप्त हैं वेदों की रचना ईसा से 1200 वर्ष पूर्व हुई। वेदों तथा उनके साहित्य को वैदिक काल कहा जाता है। जिसको उपलब्ध साहित्य के आधारपर दो कालों में विभाजित किया जाता है। प्रथम ऋग्वेदिक काल जिसमें आर्यों का आर्यवर्त में आगमन हुआ तथा उन्होंनें यहां पर आर्य संस्कृति का सूत्रपात किया। इस काल में मुख्यतया जनों का वर्णन् प्राप्त होता है। दूसरा काल जिसमें शेष तीन वेदों यथा यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, आरण्यक, ब्राह्मण, स्मृति तथा सूत्र साहित्य की रचना जिस काल में हुई उस काल को उत्तरवेदिक काल कहा जाता है। इन दोनों की कालों में आर्यों के सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक क्षेत्र में अत्यधिक महत्वपूर्ण परिवर्तन् हुए।

* सहायक आचार्य इतिहास विभाग, रा0महावि0 चिन्यालीसौड।
**सहायक आचार्य साहित्य विभाग, श्री गुरुरामराय लक्ष्मण संस्कृत महावि0 देहरादून।

राज्य व्यवस्था में राजा का स्थान महत्वपूर्ण है। वैदिक साहित्य राज्य की उत्पत्ति ईश्वर से स्वीकार करता है अर्थात् राज के देवी उत्तपत्ति के सिद्धान्त को स्वीकार करता है। राजा को मनुष्यों में देव कहा जाता है– राज्ञो विश्वजनीनस्य यो देवी मर्त्याअति। वैश्वानरस्य सुष्टुतिमा सुनीता परिक्षितः। इस काला में स्वीकार किया गया है कि देवगण राजा को राज्यभिषेक हेतु बुलाते है– आविष्ठा मित्रवर्धन तुभ्यं देवा अधब्रुवन् केवल राजा को ही नहीं अपितु राज्य की आधारभूत संस्थाओं सभा व समिति को भी प्रजापति की पुत्रियाँ कहा गया है– सभा चश्मा समितिश्चावतां प्रजाते दुर्हितारो संविदाने तथा शासक वर्ग को बाहू राजन्योऽभवत् अर्थात् विराट भगवान की भुजा कहा गया है।

वेदिककाल में राज्य से सम्बन्ध में मात्र देवी उत्पत्ति के सिद्धान्त को ही मान्यता नहीं थी अपितु राजा के निर्वाचन की अवधारणा की भी व्याख्या की गई है। इसमें राजा को प्रजा के अनुकूल रहनें की बात स्वीकार की गई है।– ध्रुवाय ते समितिः कल्पतामिहजिसके बदले प्रजा राजा को बलि अर्थात् कर देती थी– वयं तुभ्यं वहिह्रतः स्याम। इस स्वरूप को विद्वानों ने अनुबन्धिक राजतन्त्र (Contractual Monarchi) कहा है। एक तीसरा सिद्धान्त भी कहीं कहीं दिखाई देता है जिसमें परिवारवाद की धारणा का स्वरूप हमें वेदिककाल में दिखता है। वेदिककाल में समाज व उनकी संस्थाओं के क्रमिक विकास का सम्यक विवरण प्राप्त होता है। वेदों में पिता का स्थान सर्वोपरी है तथा आर्यो का समाज पितृ प्रधान था। इसलिए जैसे जैसे समाज का विकास हुआ त्यों–त्यों परिवारिक शासन के अनुरूप राजकीय शासन का विकास हुआ। वैदिक शब्दावलि में प्रयुक्त विशः, जन और विशाःपति आदि शब्द पितृप्रधान अथवा विकासवादी सिद्धान्त के द्योतक है।

इस प्रकार स्वीकार किया जा सकता है कि वैदिककाल में राजनीतिक संगठन का विकास क्रमिक रूप में हुआ। परिवार से कुल, कुलों से ग्राम, ग्रामों से समूहो, समूहों से विश और विश से जनों का विकास हुआ। जिसके अन्त में कई जनों ने मिलकर राष्ट्र की अवधारणा को बल मिला। एक जन में सामान्यता एक ही जन के व्यक्ति रहते थे। राज्यों का मूल आधार जन ही थी। आर्यों के महत्वपूर्ण भरत नामक जन के नाम पर ही हमारे राष्ट्र का नाम भारत पडा माना जाता है। इन राज्यों को वैदिककाल में जनपद या जनराज्य ही कहा जा था।

वैदिककाल में राज्य के घटकों का भी वर्णन् किया गया है। इनमें मुख्यतया स्वामी जो मूलरूप से राजा होता था। राजा को राज्य का स्वामी कहा गया है– विशां पतिरेकाष्ट्रत्वं विराज। स्वामी को विशपति या एकराट भी कहा जाता था। दूसरा मुख्य घटक अमात्य वर्ग था ये राजा को मुख्यरूप से मन्त्रणा देते थे। ये आधुनिक मन्त्रिमण्डल के समान होते थे। वेदिककाल में सभी, समिति, विदथ तथा आमन्त्रण जैसी संस्थाओं का उल्लेख किया गया है। तीसरा मुख्य घटक सुह्रत होता था जिसे मोर्यकाल में पालागल भी कहा गया है। यह राजा का मित्र होता था वेदों में कहा गया है कि ब्राह्मण विराधी शासक के मित्र उसके वश में नहीं रहतें और समिति उसके प्रतिकुल हो जाती है– उपोह्रश्च समूहश्च क्षतारौ ते प्रजापते, ताविष्ट वहतां स्फार्ति बहु भूमानयक्षितम्। अर्थात् यह राज्य का महत्वपूर्ण घटक था। चौथे घटक के रूप में कोश के दो कर्मचारियों का मुख्यरूप से वर्णन् किया गया है जिनमें एक

सग्रहकर्ता तथा दूसरा व्ययक था।– अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पु अयोध्या तस्यां हिरण्यथः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः। पाँचवा घटक राष्ट्र तथा छटा घटक दुर्ग तथा बल जैसे सातवें घटक का वर्णन् किया गया है। इनमें बल सेना के परिप्रेक्ष्य में प्रयुक्त हुआ है– स विशोनुव्यचलत, तं सेना सुराचानुव्यचलन।

वैदिक साहित्य में राजा के कर्तव्यों तथा उसके कार्यो का भी वर्णन् किया गया है। तत्कालीन शासक प्रजा पर मनमाना शासन नहीं कर सकता था। इसका कारण राजा का निर्वाचित होना कहा गया है। बेनी नामक राजा जब प्रजा पर अत्याचार करनें लगा तो ऋषियों ने उसको हटा कर नये राजा की तलाश शुरू की थी अर्थात् निर्वाचन की प्रथा से राजा पर अकुशं लगाकर रखाजाता था। इसी कारण राजा को प्रजा के अनुकूल तथा प्रजा को राजा के अनुकूल रहना पडता था। राजा को प्रजा का पालन करना होता था। प्रजा भी अच्छे राजा का हमेशाही साथ देती थी।

वैदिक साहित्य मात्र राजा, घटक या कर्तव्यों का वर्णन् नहीं करता है अपितु यह राज्य के प्रकारों का भी वर्णन् करता है। वैदिक साहित्य में एकतन्त्रात्मक तथा गणतन्त्रात्मक शासन का वर्णन् किया गया है। एकतन्त्रातमक शासन की सहायता सभा व समिति करती थी– सभां च मा समितिश्चावतां प्रजापतेर्हुहितरौ सविदाने। इसके साथ ही पुरोहित व ग्रामणी भी एकतन्त्रात्मक शासन की सहायता करनें के लिए बनाये गये है। वहीं गणतन्त्रात्मक शासन की व्याख्या भी वेदों में की गई है। गणों के लिए महागण जैसे उद्भोदनों का प्रयोग किया गया है– गणेभ्यः स्वाहः। महागणेभ्यः स्वाहः। कुलो के समुह को गण कहा जाता था– कुलानां हि समूहस्तु गणः सपहिकीर्तितः। वैदिककाल में अनेक गणतन्त्रों (82) का उल्लेख किया गया है।

इस प्रकार वैदिककाल में राजा, राजतन्त्र तथा राज्य का पूर्णरूप से वर्णन् किया गया है। जो तत्कालीन समयकाल से वर्तमान काल तक अपनी उपयोगिता को सिद्ध करता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ– सूची

1. मनु स्मृति अध्याय 07
2. महाभारत 1/58–63
3. वजपेयी– हिन्दू राजशास्त्र पृ0 55।
4. अथर्ववेद 20/127/7।
5. अथर्ववेद 4/9/2।
6. अथर्ववेद 7/12/1
7. अथर्ववेद 19/6/6।
8. अथर्ववेद 3/4/6,87।
9. अथर्ववेद 6/88/3।
10. अथर्ववेद 12/1/6।
11. जायसवाल, काशीप्रसाद– हिन्दी पोलिटि पृ0 191।
12. अथर्ववेद 8/1./1–7।

13. विद्यालंकार, सत्यकेतु– प्राचीन भारतीय इतिहास का वैदिक युग– पृ0 133।
14. अथर्ववेद 3/4/1।
15. अथर्ववेद 5/19/15।
16. अथर्ववेद3/24/7।
17. अथर्ववेद 10/2/31।
18. अथर्ववेद 6/78/2।
19. अथर्ववेद 19/50/4।
20. अथर्ववेद 15/9/1–2।
21. अथर्ववेद 3/4/2, 4/8/7।
22. अथर्ववेद 6/78/2।
23. अथर्ववेद 7/12/1।
24. अथर्ववेद 7/12/1।
25. अथर्ववेद 19/2/16–17।
26. श्रीराम शर्मा– हिन्दु राजतन्त्र – पृ0 23, 83–108।